e-ISSN:2582-7219

INTERNATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY RESEARCH IN SCIENCE, ENGINEERING AND TECHNOLOGY

Volume 6, Issue 12, December 2023

INTERNATIONAL STANDARD SERIAL NUMBER INDIA

Impact Factor: 7.54

International Journal of Multidisciplinary Research in Science, Engineering and Technology (IJMRSET)

| ISSN: 2582-7219 | www.ijmrset.com | Impact Factor: 7.54| A Monthly, Double Blind Peer Reviewed Journal|

| Volume 6, Issue 12, December 2023 |

| DOI:10.15680/IJMRSET.2023.0612038 |

कुमारसंभवम् में आरोग्य और धर्मसाधना

Dr. Shailja Rani Agnihotri

Associate Professor, Department of Sanskrit, S.D. Govt. College, Beawar, Rajasthan, India

सार: कुमारसम्भवम् (अर्थ : 'कुमार का जन्म') महाकवि कालिदास विरचित कार्तिकेय के जन्म से संबंधित[1] महाकाव्य जिसकी गणना संस्कृत के पंच महाकाव्यों में की जाती है।

इस महाकाव्य में अनेक स्थलों पर स्मरणीय और मनोरम वर्णन हुआ है। हिमालयवर्णन, पार्वती की तपस्या, ब्रह्मचारी की शिवनिंदा, वसन्त आगमन, शिवपार्वती विवाह और रतिक्रिया वर्णन अदभुत अनुभूति उत्पन्न करते हैं। कालिदास का बाला पार्वती, तपस्विनी पार्वती, विनयवती पार्वती और प्रगल्भ पार्वती आदि रूपों नारी का चित्रण अद्‌भुत है।

कवित्व व काव्य-कला के हर प्रतिमान की कसौटी पर 'कुमारसंभव' एक श्रेष्ठ महाकाव्य सिद्ध होता है। मानव-मन में कवि की विलक्षण पैठ सर्वत्र दृष्टिगोचर होती है। पार्वती, शिव, ब्रह्मचारी आदि सभी पात्र मौलिक व्यक्तित्व व जीवन्तता से सम्पन्न हैं। प्रकृति-चित्रण में कवि का असाधारण नैपुण्य दर्शनीय है। काम-दहन तथा कठोर तपस्या के फलस्वरूप पार्वती को शिव की प्राप्ति सांस्कृतिक महत्त्व के प्रसंग हैं। कवि ने दिव्य दम्पत्ति को साधारण मानव प्रेमी-प्रेमिका के रूप में प्रस्तुत कर मानवीय प्रणय व गार्हस्थ्य जीवन को गरिमा-मंडित किया है।

यह महाकाव्य १७ सर्गों में समाप्त हुआ है, किंतु लोक धारणा है कि केवल प्रथम आठ सर्ग ही कालिदास रचित हैं। बाद के अन्य नौ सर्ग अन्य कवि की रचना है ऐसा माना जाता है। कुछ लोगों की धारणा है कि काव्य आठ सर्गों में ही शिवपार्वती समागम के साथ कुमार के जन्म की पूर्वसूचना के साथ ही समाप्त हो जाता है। कुछ लोग कहते हैं कि आठवें सर्ग मे शिवपार्वती के संभोग का वर्णन करने के कारण कालिदास को कुष्ठ हो गया और वे लिख न सके। एक मत यह भी है कि उनका संभोगवर्णन जनमानस को रुचा नहीं इसलिए उन्होंने उसे आगे नहीं लिखा।

I. परिचय

कुमारसंभव का शाब्दिक अर्थ है- 'कुमार का जन्म' । यहाँ 'कुमार' से आशय शिव-पार्वती के पुत्र कार्तिकेय या स्कन्द से है। कवि का उद्देश्य शिव-पार्वती की तपस्या, प्रेम, विवाह और उनके पुत्र कुमार कार्तिकेय के जन्म की पौराणिक कथा को एक महाकाव्य का रूप देना है। कालिदास ने कथा के सूत्र कहाँ से लिये, यह बताना कठिन है। वैसे 'शिव महापुराण' व अन्य पुराणों में इस कथा के अनेक प्रसंग व सूत्र मिलते हैं, पर पुराणों का रचनाकाल अनिश्चित होने के कारण यह बताना सम्भव नहीं कि कालिदास ने पुराणों से यह कथा ली है या पुराणों ने ही कालिदास से काव्य से प्रभावित होकर इसके अनेक प्रसंगों व अभिव्यक्तियों को अपना लिया है। उदाहरण के लिए शिव महापुराण में कुमारसम्भव की अनेक पंक्तियां, वाक्य, शब्द-प्रयोग व प्रसंग उसी रूप में उपलब्ध है। 'रामायण' के बालकाण्ड के सैंतीसवें सर्ग तथा 'महाभारत' के वन पर्व के अध्याय 225 में भी कार्तिकेय या स्कंद के जन्म की कथा संक्षेप में कही गई है।

इसमें वर्णित कथा संक्षेप में इस प्रकार है-
पर्वतराज हिमालय के यहाँ मैनाक नामक पुत्र और गौरी नामक कन्या हुई। कन्या पार्वती और उमा नाम से भी विख्यात हुई। जब कन्या हुई तो एक दिन उसके घर नारद आए और भविष्यवाणी की कि कन्या का विवाह शिव से होगा। यह भविष्यवाणी सुनकर हिमालय निश्चिंत हो गए। उधर शिव हिमालय के शिखर पर तप कर रहे थे। हिमालय ने एक सखी के साथ उमा को उनकी परिचर्या के लिये भेज दिया और उमा भक्तिभाव से शिव की सेवा करने लगी।[1,2,3]

उन्हीं दिनों तारकासुर से युद्ध में देवता लोग पराजित हो गए। दैत्य अनेक प्रकार के छल करने लगा। तब इन्द्र सहित सारे देवता ब्रह्मा के पास आए। तारकासुर के निमित्त योग्य सेनापति की माँग की। तब ब्रह्मा ने कहा कि शंकर के वीर्य से उत्पन्न पुरूष ही तुम्हारा योग्य सेनापति हो सकता है। इसलिए तुम लोग प्रयास करो जिससे शिव पार्वती के प्रति आसक्त हों। यदि शिव ने पार्वती को स्वीकार कर लिया तो पार्वती से जो पुत्र होगा उसे सेनापति बनाने पर तुम्हारी विजय होगी। तत्पश्चात् इंद्रादि देवता शिव के विरक्त भाव को हटाने के उपाय पर विचार करने के लिये एकत्र हुए। जब मदन उस सभा मे आए तो इंद्र ने उनसे अनुरोध किया कि वे अपने मित्र वसन्त के साथ शिव के तपस्या स्थान पर जायँ और शिव को पार्वती के प्रति आसक्त करें। तदनुसार मदन अपनी पत्नी रति और मित्र वसन्त को लेकर शंकर के आश्रम में पहुँचा। जब पार्वती कमलबीज की माला अर्पण करने शिव के निकट पहुँची और शिव ने

| ISSN: 2582-7219 | www.ijmrset.com | Impact Factor: 7.54| A Monthly, Double Blind Peer Reviewed Journal|

| Volume 6, Issue 12, December 2023 |

| DOI:10.15680/IJMRSET.2023.0612038 |

उसे लेने के लिये हाथ बढाया, तब मदन ने अपने धनुष पर मोहनास्त्र चढ़ाया। तत्क्षण शिव का मन विचलित हुआ। शंकर ने इस प्रकार मन के अकस्मात् विकृत होने का कारण जानने के लिये चारों ओर दृष्टि दौडाई। उन्हें शरसंधान करता मदन दिखाई पड़ा। उसे देखते ही शिव आग बबूला हो गए; उनके तृतीय नेत्र से अग्निज्वाला प्रकट हुई और मदन उसमें भस्म हो गया।

रति अपने पति को इस प्रकार भस्म होते देख विलाप करने लगी और वसंत से चिता तैयार करने को कहा और स्वयं प्राण त्यागने को तैयार हुई। तब आकाशवाणी हुई कि थोड़ा सब्र करो तुम्हे तुम्हारा पति पुन प्राप्त होगा।

उधर शिव नारीसंपर्क से बचने के लिए अंतर्धान हो गए। मदन के भस्म होने और शिव के अंतर्धान हो जाने से पार्वती ने अपना सारा मनोरथ विफल होते देखा और यह सोचकर कि यह रूपसौंदर्य व्यर्थ है, वे शिव को प्रसन्न करने के लिए एक पर्वत शिखर पर जा कर उग्र तप करने लगी। कुछ काल के अनन्तर शिव का मन पिघला उन्होंने पार्वती को स्वीकार करने का विचार किया। किन्तु इससे पूर्व उन्होंने पार्वती की परीक्षा करने का निश्चय किया और वे एक ब्रह्मचारी तपस्वी के रूप में पार्वती के आश्रम में पहुँचे। पार्वती ने अतिथि के रूप में उनका समुचित सत्कार किया। तदन्तर उस तरुण तपस्वी ने पार्वती से जिज्ञासा की कि किसकी प्राप्ति के लिए इतनी उग्र तपस्या कर रही हो। अतिथि के प्रश्न को सुनकर पार्वती लज्जित हुई और अपने मनोभाव प्रकट करने मे संकोच करने लगी तब उनकी सखी ने शिव की प्राप्ति की इच्छा की बात कही। यह सुनकर तपस्वी वेशधारी शिव, शिव के दुर्गुणों और कुरूपता आदि का उल्लेख कर उनकी निन्दा करने लगे। पार्वती को यह शिव निन्दा नही हुई और उन्हे डाँटने लगी। तब शिव अपने स्वरूप मे प्रकट हुए और उनका हाथ पकड़ लिया।

तत्पश्चात शिव ने सप्तर्षि को बुलाकर हिमालय के पास भेजा। उन्होंने उनसे जाकर बताया कि शिव ने पार्वती का पाणिग्रहण करने की इच्छा प्रकट की है। तब विवाह का निश्चय हुआ और विवाह की तैयारी होने लगी। सप्तमातृकाएँ दूल्हे के योग्य वस्त्र लेकर आई पर शिव ने उन सब को स्वीकार नहीं किया और नन्दी पर सवार होकर ही चले। पश्चात् विवाह की सारी क्रियाएँ हुई। विवाह संपन्न होने पर शिव सहित पार्वती ने ब्रह्मा को प्रणाम किया। ब्रह्मा ने आशीर्वाद दिया। तुम्हें वीर पुत्र हो। अप्सराओं ने आकर वर-वधु के सम्मुख एक नाटक प्रस्तुत किया। नाटक समाप्त होने के बाद इंद्र ने शिव से मदन को जीवित करने का अनुरोध किया। अंत में शिव और पार्वती के एकांत मिलन की चर्चा विस्तार से की गई है।

संरचना

कुमारसम्भव महाकाव्य १७ सर्गों में समाप्त हुआ है, किन्तु लोक धारणा है कि केवल प्रथम आठ सर्ग ही कालिदास रचित हैं और बाद के अन्य नौ सर्ग किसी अन्य कवि की रचना हैं। इस महाकाव्य के नाम से लगता है कि इसमें कुमार के जन्म तक का वृतान्त होना चाहिए किन्तु आठ सर्गों में शिव-पार्वती विवाह तक का ही प्रसंग आ पाया है और लगता है कि यह ग्रन्थ कालिदास ने अपूर्ण ही छोड़ दिया। कुछ लोगों की धारणा है कि यह काव्य आठ सर्गों में ही शिवपार्वती समागम के साथ कुमार के जन्म की पूर्वसूचना के साथ ही समाप्त हो जाता है। संभव है, कालिदास का उद्देश्य कुमार कार्तिकेय के जन्म का संकेत मात्र करना रहा हो, न कि उसका साक्षात् विस्तृत वर्णन। इस दृष्टि से 'कुमारसम्भव' अपने वर्तमान रूप में एक संपूर्ण काव्य ही माना जाना चाहिए, अधूरी रचना नहीं।

कालिदास-प्रणीत अंश के आठवें सर्ग में कवि ने शिव व पार्वती की विवाहोपरान्त कामक्रीड़ाओं का काफी खुलकर वर्णन किया गया है। परम्परा से यह प्रसिद्ध है कि कालिदास के इस वर्णन से पार्वती जी रुष्ट हो गई और इसे माता–पिता के नग्न शृंगार-चित्रण के समान मानते हुए कवि को शाप दिया, जिसके कारण कालिदास अपनी कवित्व-शक्ति से वंचित हो गए व काव्य को पूरा नहीं कर सके। एक मान्यता यह भी है कि शिव-पार्वती के संभोग-वर्णन को अनुचित मानते हुए तत्कालीन सहृदयों ने कालिदास की कटु आलोचना की, जिससे हतोत्साहित होकर उन्होंने काव्य को अधूरा ही छोड़ दिया। संभवतः इसलिए कवि काव्य के नामकरण के अनुसार इसमें कुमार कार्तिकेय के जन्म के प्रसंग का वर्णन नहीं कर सका। एक मत यह भी है कि इस काव्य की एकमात्र मूल में से आठवें सर्ग के बाद के पन्ने किसी कारण से नष्ट हो गए, जिनमें कुमार-जन्म का वृत्तान्त रहा होगा। एक सर्ग समाप्त होने के बाद कवि की अकस्मात मृत्यु हो गई और यह अधूरा ही रह गया, पर यह कल्पना उचित प्रतीत नहीं होती, क्योंकि फिर तो 'कुमारसम्भव' को कालिदास की अंतिम रचना मानना पड़ेगा, जबकि 'रघुवंश' कुमारसंभव' के बाद का काव्य मालूम पड़ता है।[4,5,6]

नौवें से सत्रहवें सर्ग तक का भाग कालिदास कृत नहीं है, इस विषय में अनेक तर्क दिये गये हैं। अरुणगिरिनाथ व मल्लिनाथ ने 'कुमारसंभव' के आरम्भिक आठ सर्गों पर ही अपनी टीका लिखी है। यह सम्भवतः इसलिए हुआ कि उस समय आगे के सर्ग उन्हें उपलब्ध नहीं थे। काव्यशास्त्र के दूसरे आचार्यों ने प्रारम्भ के आठ सर्गों में से ही अपने ग्रन्थों में श्लोक उद्धृत किये हैं, आगे के नौ सर्गो में से एक भी उदाहरण प्रस्तुत नहीं किया। तीसरे इन सर्गों में कवित्व व काव्य कला का स्तर पूर्व के आठ सर्गों की तुलना में निम्नस्तरीय है, उसे कालिदास के कवित्व शक्ति के अनुरूप नहीं माना जा सकता है। इस भाग के श्लोकों में व्याकरण की अनेक त्रुटियाँ छन्दोभंग, यतिभंग तथा अनेक दोष दिखाई देते हैं, जिससे कोई सन्देह नहीं रह जाता कि इन परवर्ती नौ सर्गों की रचना बाद में किसी अज्ञातनाम कवि ने की और कालिदास की मूल रचना के साथ उसे मिला दिया।

| ISSN: 2582-7219 | www.ijmrset.com | Impact Factor: 7.54| A Monthly, Double Blind Peer Reviewed Journal|

| Volume 6, Issue 12, December 2023 |

| DOI:10.15680/IJMRSET.2023.0612038 |

बाद के नौ सर्गों में कुमार कार्तिकेय के जन्म बाल्यकाल, युवा होने पर उसके द्वारा देवसेना का नेतृत्व तथा अत्याचारी तारकासुर वध आदि का वृत्तान्त विस्तार से प्रस्तुत किया है। इस प्रकार नौ सर्गों के इस अज्ञात लेखक ने काव्य के नाम को ध्यान रखते हुए कुमार कार्तिकेय के जन्म आदि प्रसंगों की रचना कर अपनी दृष्टि से कालिदास के अपूर्ण काव्य को पूरा करने का प्रयास किया है

प्रथम सर्ग
कालिदास ने कुमारसम्भव को हिमालय-वर्णन से आरम्भ किया है। प्रथम सर्ग के प्रारम्भिक सत्रह पद्यों में कवि ने हिमालय पर्वत का भव्य व गरिमापूर्ण चित्रण करते हुए इसकी विविध छवियों, प्राकृतिक वैभव इसके निवासियों के कार्य-कलापों तथा पर्वतराज के पुराकथात्मक व्यक्तित्व का उदात्त चित्रण किया है।

अस्युत्तरस्यां दिशि देवतात्मा हिमालयो नाम नगाधिराजः ।
पूर्वापरौ तोयनिधी वगाह्य स्थितः पृथिव्यां इव मानदण्डः ॥
(अर्थ: (भारतवर्ष के) उत्तर दिशा में देवताओं की आत्मा वाला पर्वतों का राजा हिमालय है, जो पूर्व और पश्चिम दोनों समुद्रों का अवगाहन करके पृथ्वी के मापने के दण्ड के समान स्थित है। तात्पर्य यह है कि हिमालय का विस्तार ऐसा है कि वह पूर्व और पश्चिम दोनों दिशाओं के समुद्रों को छू रहा है।)

तत्पश्चात् पार्वती के जन्म, बाल्यकाल, यौवन-प्राप्ति व विलक्षण सौंदर्य का परिचय देते हुए नारद की भविष्यवाणी का उल्लेख किया गया है, जिसके अनुसार पार्वती का विवाह शिव के साथ ही होगा। इस भविष्वाणी में विश्वास कर पिता हिमालय पुत्री को कैलाश पर्वत पर तपस्यारत भगवान् शिव की सेवा के लिये भेज देते हैं।

द्वितीय सर्ग
दूसरे सर्ग में इन्द्र आदि सभी देवता तारकासुर के अत्याचारों से त्रस्त होकर ब्रह्माजी के पास जाकर अपनी कष्ट-कथा सुनाते है तथा प्रार्थना करते हैं कि आप ही तारकासुर का दमन कर सकते हैं। ब्रह्माजी अपनी विविशता प्रकट करते हैं कि मेरे ही वरदान से वह इतना शक्तिशाली हुआ है, मैं स्वयं उसका संहार नहीं कर सकता। वे देवताओं को उपाय बताते हैं कि शिव का यदि पार्वती से विवाह हो जाए तो इस युगल से उत्पन्न पुत्र तारकासुर को नष्ट कर सकता है। शिव का वीर्य धारण करने की क्षमता पार्वती के अतिरिक्त किसी में नहीं है। इसलिए आप लोग कोई ऐसा उपाय करें, जिससे तपस्या में तल्लीन शिव का मन पार्वती में अनुरक्त हो। ब्रह्मा जी के इस परामर्श के पश्चात् इन्द्र कामदेव को स्मरण करते हैं। कामदेव के देवराज इन्द्र के सम्मुख उपस्थित होने के साथ ही सर्ग की समाप्ति होती है।

तृतीय सर्ग
कामदेव के उपस्थित होने पर देवराज इन्द्र ने उन्हें आदरपूर्वक अपने पास बैठाया। कामदेव इन्द्र से विनम्र होकर उनकी चिन्ता का कारण ज्ञात करने लगे। कामदेव अपनी वीरता की प्रशंसा करते हुए बोले, कि मैं शिवजी तक को अपने वाणों का कौशल दिखा सकता हूँ। देवराज इन्द्र ने कामदेव को उत्साहित करते हुए कहा कि ब्रह्मा जी से ज्ञात हुआ है कि महादेव से उत्पन्न पुत्र देवताओं का सेनापति बनाया जाय तो देवताओं की विजय अवश्य होगी। महादेव का वीर्य धारण करने की क्षमता केवल पर्वतकन्या पार्वती में ही है। पार्वती अपने पिता से आज्ञा प्राप्त करके महादेव की सेवा में लगी हुई हैं। आप अपने मित्र बसन्त के साथ देवताओं का यह कार्य अवश्य करें, इससे आपको यश प्राप्ति होगी। इन्द्र की आज्ञा पाकर कामदेव अपने सखा बसन्त के साथ उस स्थान की ओर गये, जिधर शिव समाधि लगाये बैठे हुए थे। बसन्त ने प्रचण्ड रूप से अपना प्रभाव प्रदर्शित किया। पशु-पक्षी, देव, यक्ष, किन्नर, मानव तथा ऋषि-मुनियों में भी काम विकार उत्पन्न होने लगा। परन्तु महादेव निर्विकार भाव से समाधि में मग्न बैठे रहे। नन्दी द्वारपाल के रूप में पहरा दे रहा था। उसने सभी गणों को सतर्क कर दिया, किन्तु नन्दी की दृष्टि को बचाता हुआ कामदेव उस स्थान पर पहुँच गया, जहाँ शिवजी समाधि लगाये बैठे थे। शिव के तेजस्वी रूप को देखकर कामदेव भयभीत हो गया तथा उसके हाथ से धनुष-वाण छूटकर गिर गये। उसी समय मालिनी और विजया नाम की वन-देवियों के साथ पार्वती पर कामदेव की दृष्टि पड़ी। पार्वती का सौन्दर्यावलोकन के पश्चात् कामदेव के मन में महादेव को जीतने की अभिलाषा पुनः बलवती हो गयी।[5,6,7] ठीक उसी क्षण पार्वती महादेव के आश्रम के द्वार पर उपस्थित हो गयीं। ठीक उसी समय महादेव ने भी परमेश्वर की परमज्योति का दर्शन करके अपनी समाधि तोड़ दी। नन्दी ने समाधि खुली होने पर प्रणाम करते हुए पार्वती का परिचय कराया। महादेव ने पार्वती को असाधारण पति प्राप्त करने का आशीर्वाद दिया। पार्वती भक्ति भाव से महादेव के गले में कमल बीजों की माला पहना रही थीं, उसी समय उचित अवसर जानकर कामदेव ने "सम्मोहन" नामक अचूक बाण धनुष पर चढ़ा लिया। पार्वती को देखकर शिव के मन में कामविकार उत्पन्न होने लगा। परन्तु महादेव ने अपनी चंचल इन्द्रियों को वश में करते हुए चारों ओर दृष्टिपात किया। जब उन्होंने लक्ष्य साधे हुए कामदेव को देखा, तब अपने तप में बाधक बने कामदेव पर वह अत्यधिक क्रोधित हुए। महादेव ने अपने तृतीय नेत्र की अग्नि से कामदेव को भस्म कर दिया। महादेव ने तप में बाधक स्त्रियों का साथ छोड़ देने का निश्चय किया। वे उसी क्षण अपने गणों के साथ अंतर्ध्यान हो गये।

चतुर्थ सर्ग

| ISSN: 2582-7219 | www.ijmrset.com | Impact Factor: 7.54| A Monthly, Double Blind Peer Reviewed Journal|

| Volume 6, Issue 12, December 2023 |

| DOI:10.15680/IJMRSET.2023.0612038 |

इस सर्ग में कामपत्नी रति का करुण विलाप है। रति कामदेव के सहवास काल की स्मृतियों का स्मरण करके विलाप करती है। वह कामदेव के बिना अपने जीवन को अधूरा समझती है। वह अपने पति के मित्र बसन्त से अपनी चिता तैयार करने का आग्रह करती है। उसी समय आकाशवाणी होती है। आकाशवाणी द्वारा रति को सांत्वना दी जाती है कि उसका पति कुछ दिनों बाद उसे अवश्य मिल जायेगा। ब्रह्मा के शापवश कामदेव शिव के तृतीय नेत्र से भस्म हुए हैं। जब पार्वती की तपस्या से प्रसन्न होकर शिव उनके साथ विवाह कर लेंगे, तब कामदेव को पूर्ववत् शरीर देने की कृपा करेंगे। आकाशवाणी सुनकर रति ने अपना शरीर त्यागने का विचार छोड़ दिया।

पञ्चम सर्ग

महादेव द्वारा मदनदहन की घटना के उपरान्त पार्वती ने अपने सौन्दर्य की निन्दा करते हुए तप द्वारा महादेव को पतिरूप में प्राप्त करने का निश्चय किया। पार्वती की माँ ने उन्हें तप करने से मना किया, किन्तु वह अपने निश्चय से विचलित नहीं हुई। अपने पिता की आज्ञा से पार्वती ने हिमालय के उस शिखर पर तपस्या आरम्भ कर दी, जिसका कालान्तर में गौरी शंकर नाम पड़ गया। पार्वती की तपस्या ऋषि-मुनियों को भी विस्मित करने वाली थी। तपोरत पार्वती के आश्रम में कुछ दिनों के पश्चात् महादेव गुप्त वेश में उनके निकट गये। ब्रह्मचारी बने हुए महादेव ने पार्वती से तप का कारण पूछा। पार्वती का संकेत पाकर उसकी सखी ने ब्रह्मचारी को बताया, कि मेरी सखी महादेव को पतिरूप में प्राप्त करने के लिए इतना कठोर तप कर रही हैं। ब्रह्मचारी ने अनेक प्रकार से भगवान शिव की आलोचना एवं निन्दा की। अपने आराध्य की निन्दा को असहनीय जानकर पार्वती ने अपनी सखी से, ब्रह्मचारी को मौन रहने के लिए कहा। शिव निन्दा श्रवण में अक्षम पार्वती ने अन्यत्र गमन का उपक्रम किया। उसी क्षण महादेव प्रकट रूप में आ गये एवं पार्वती से बोले - हे देवि! मैं आपकी तपस्या से खरीदा हुआ आपका दास हूँ। इसी के साथ पंचम सर्ग का समापन होता है।

षष्ठ सर्ग

पार्वती ने महादेव को अपने ऊपर प्रसन्न देखकर अपनी सखी से कहलाया, कि यदि वे मुझसे विवाह करने के लिए अभिमत हैं तो पिता हिमालय के निकट जाकर अनुमति प्राप्त करें। इतना कहकर पार्वती महादेव की आज्ञा से अपने पिता के घर चली गईं। पार्वती के प्रस्थानान्तर महादेव ने सप्त-ऋषियों को स्मरण किया। सप्तर्षि अरुन्धती के साथ महादेव के सम्मुख उपस्थित होकर स्मरण करने का कारण पूछते हैं। महादेव सप्तर्षियों से कहते हैं कि देवता मुझसे पुत्र उत्पन्न कराना चाहते हैं। पुत्र उत्पन्न करने हेतु मैं पार्वती से विवाह करना चाहता हूँ। आप लोग पर्वतराज हिमालय से पार्वती की याचना करने मेरी ओर से जायें। आर्या अरुन्धती इस कार्य में विशेष सहयोग कर सकती हैं। आप लोग हिमालय के औषधिप्रस्थ नगर में जाकर कार्य सफल करने के उपरान्त मुझे महाकोशी नदी के झरने पर मिलने की कृपा करें। सप्तर्षि औषधिप्रस्थ नगर जाते हैं। कवि ने औषधि-प्रस्थ नगर का सुन्दर वर्णन किया है। सप्तर्षि पर्वतराज हिमालय के पास जाते हैं। हिमालय ने सप्तर्षियों का विधिपूर्वक आदर सत्कार किया तथा उनके आगमन पर अपने आपको धन्य माना। हिमालय ने सप्तर्षियों से अपने योग्य सेवा कार्य करने के लिए पूछा, तब अंगिरा ऋषि ने हिमालय से कहा, कि हम लोग महादेव का संदेश लेकर आपके पास आये हैं। महादेव ने अपने विवाह के लिए आपकी पुत्री माँगी है। महादेव संसार के पिता हैं, उनसे अच्छा वर आपकी पुत्री के लिए कोई नहीं हो सकता है। हिमालय ऋषि अंगिरा की बात से सहमत हो गये और अपनी पत्नी मैना से भी सहमति प्राप्त करके महादेव को अपनी पुत्री देने की सहमति प्रदान कर दी। तीन दिन बाद विवाह की तिथि निश्चित हो गयी। हिमालय से विदा लेने के उपरान्त सप्तर्षियों ने महादेव को विवाह की तिथि बतायी और आकाश में उड़ गये।[2,3,4]

सप्तम सर्ग

इस सर्ग में पार्वती का विवाह वर्णन है। हिमालय ने सभी कुटुम्बियों को बुलाकर शुक्ल पक्ष की पूर्णिमा को अपनी पुत्री के विवाह का आयोजन किया। पार्वती को वधू के वेष में सजाया गया। सभी प्रकार की मांगलिक सामिग्रियों से पार्वती को अलंकृत किया गया। वधू वेष में पार्वती की सुन्दरता अवर्णनीय थी। महादेव भी बारात लेकर औषधिप्रस्थ नगर जाते हैं। महादेव नन्दी पर बैठे हुए थे, उनके गण मंगलवाद्य बजाते हुए उने आगे चल रहे थे। विश्वकर्मा के द्वारा निर्मित छत्र सूर्यदेव भगवान शिव के ऊपर लगाये हुए थे। महादेव की बारात में ब्रह्मा, विष्णु, महेश तथा पुरोहित सप्तर्षि चल रहे थे। औषधिप्रस्थ नगर पहुँचने पर हिमालय ने अपने कुटुम्बियों के साथ हाथी पर चढ़कर शिव की अगवानी की। महादेव की बारात ने जब नगर में प्रवेश किया, तब सभी स्त्रियाँ अपने-अपने कार्यों को छोड़कर शिव को देखने दौड़ पड़ी। भवनों के झरोखों, अट्टालिकाओं से शिव के दर्शन किये एवं उनकी भूरि-भूरि प्रशंसा की। शुभ मुहूर्त में महादेव-पार्वती का विवाह पुरोहितों ने किया। ब्रह्मा ने वधू को वीरमाता बनने का आशीष दिया। सरस्वती ने संस्कृत तथा पालि में वर-वधू की प्रशंसा की। विवाह कार्य के सम्पन्न होने के पश्चात् देवताओं ने शिव से कामदेव को जीवित करने का आग्रह किया। शिव ने कामदेव को जीवित कर दिया। इनके अनन्तर शिव ने सभी देवताओं को विदा किया, और पार्वती का हाथ पकड़कर विनोद भवन में चले गये।

अष्ठम सर्ग

इस सर्ग में शिव-पार्वती की काम-क्रीड़ा का श्रृंगारिक वर्णन है। प्रारम्भ में पार्वती महादेव की कामुक चेष्टाओं से भयभीत हो जाती थीं, परन्तु कुछ दिनों बाद पार्वती भी काम-क्रीड़ाओं में प्रशिक्षित हो गयीं। इस प्रकार विभिन्न प्रकार से महादेव ने एक मास तक पार्वती के साथ रमण किया। तत्पश्चात् महादेव ने हिमालय से जाने की अनुमति माँगी। नन्दी पर आरूढ़ होकर महादेवी पार्वती के साथ सुमेरू

| ISSN: 2582-7219 | www.ijmrset.com | Impact Factor: 7.54| A Monthly, Double Blind Peer Reviewed Journal|

| Volume 6, Issue 12, December 2023 |

| DOI:10.15680/IJMRSET.2023.0612038 |

पर्वत पर पहुँचे। वहाँ उन्होंने एक रात्रि म्ेजमसंत 58 विश्राम किया। मेरू पर्वत से प्रस्थान कर वे कैलाश पर्वत पर जा पहुँचे। कैलाश पर कुछ दिन बिताकर वे मलय पर्वत, नन्दन वन होते हुए गन्ध मादन पर्वत पर पहुँच गये। वहाँ महादेव ने बहु प्रकार पार्वती को उद्दीप्त करके काम-क्रीड़ाओं का आनन्द लिया। उन्होंने पार्वती के साथ सैकड़ों वर्ष काम-क्रीड़ाओं में इस प्रकार बिता दिये कि मानो एक रात्रि ही बीती हो।

नवम् सर्ग

जिन दिनों शिव अपनी प्रिया पार्वती के साथ काम-क्रीड़ा में रत थे, उन्हीं दिनों उनके विनोद भवन में एक कबूतर प्रविष्ट हो गया था। भगवान शंकर ने उसे देखते ही विचार किया, कि निश्चय ही अग्निदेव कपट वेष में आया होगा। क्रोध से महादेव की भृकुटि तन गयीं, इसे देखकर कबूतर सच्चा रूप बनाकर महादेव से विनम्र वाणी में बोला - महादेव! आपने अपनी प्रिया के साथ सौ वर्ष तो इसी प्रकार काम-क्रीड़ाओं में ही बिता दिये। इन्द्रादि देवता आपके दर्शन पाना चाहते हैं। आप अपने वीर्य से ऐसा वीर पुत्र उत्पन्न करने की कृपा करें, जिसे देवताओं का सेनापति बनाकर तारकासुर पर विजय प्राप्त हो सके। अग्निदेव की विनती पर भगवान शिव ने अपना वह तेज अग्निदेव को समर्पित कर दिया। उसी समय काम-क्रीड़ाओं में बाधक बने अग्निदेव को पार्वती ने कोढ़ी हो जाने का श्राप दे दिया। शिव ने अपने वचनचातुर्य एवं प्रेमालापों से पार्वती का क्रोध शान्त किया। उसी समय जया और विजया नाम की सखियों ने पार्वती का श्रृंगार करना आरम्भ कर दिया। उचित अवसर समझते हुए नन्दी ने महादेव को प्रणाम करते हुए इन्द्रादि देवताओं के उपस्थित होने की सूचना दी। शिव पार्वती के साथ विनोद भवन से निकलकर देवताओं से मिलते हैं। तत्पश्चात् देवताओं को विदा करने के उपरान्त शिव अपनी प्रिया के साथ नन्दी पर आरूढ़ होकर कैलाश शिखर के लिए प्रस्थान करते हैं।

दशम् सर्ग

भगवान शिव के उस तेज को लेकर अग्निदेव इन्द्र की सभा में उपस्थित हुए। अग्निदेव का ऐसा विकृत रूप देखकर इन्द्र ने इसका कारण पूछा। अग्निदेव ने बताया, कि मैं आपकी आज्ञा को शिरोधार्य कर कबूतर का वेष बनाकर शिव के विनोद भवन में उपस्थित हुआ, तब उन्होंने मुझे तत्काल ही पहचान लिया। लज्जावश महादेव संभोग सुख से विरत हो गये, तथा उन्होंने अपना वीर्य मेरे शरीर के ऊपर गिरा दिया। संभोग सुख में बाधा उत्पन्न होने पर पार्वती ने भी मुझे कुष्ठी हो जाने का श्राप दे दिया। महादेव के इस प्रचण्ड तेज से मेरा शरीर जला जा रहा है। आप मेरी प्राणरक्षा का कोई उपाय बताने की कृपा करें। इन्द्र के परामर्शानुसार अग्निदेव गंगा में कूद गये। गंगा ने महादेव का वह तेज अपने अन्दर ग्रहण कर लिया। महादेव के उस तेज से गंगा का जल उबलने लगा, तथा उसमें रहने वाले जीव-जन्तु व्याकुल होकर बाहर निकलने लगे, परन्तु गंगा ने वह तेज अपने अंदर संजोये रखा। कुछ दिवसों के अनन्तर छः कृत्तिकाएँ गंगा में स्नानार्थ आयीं। गंगा ने वह तेज उन कृत्तिकाओं को दे दिया। उस तेज ने छः कृत्तिकाओं के अन्दर गर्भ का रूप ले लिया। वे कृत्तिकाएँ लाजवश तथा अपने पतियों के भय से भयभीत हो गयीं, परन्तु उन्होंने बुद्धिमत्तापूर्वक अपने-अपने गर्भ की रक्षा की। लज्जा तथा भय के कारण वे अपने-अपने गर्भ को एक झाड़ी में छोड़कर वे अपने-अपने घर चली गयीं। वह तेजस्वी गर्भ सैकड़ों सूर्यों को भी परास्त करने वाला था।[3,4,5]

एकादश सर्ग

इस सर्ग में कुमार कार्तिकेय की बाललीला का नैसर्गिक वर्णन है। इन्द्रादि देवताओं की प्रार्थना पर गंगा ने स्त्री का रूप धारण कर बालक को स्तनपान कराया। वह बालक क्षण-प्रतिक्षण बढ़ने लगा। इस तेजस्वी बालक को प्राप्त करने के लिए गंगा, अग्निदेव तथा छः कृत्तिकाओं के मध्य कलह होने लगा। उसी समय महादेव अपनी प्रिया पार्वती के साथ विमान पर आरूढ़ उस स्थान पर पहुँचे। उस दिव्य बालक को देखकर पार्वती ने महादेव से उसकी माता का नाम पूछा। महादेव ने पार्वती को बताया, कि देवि! तुम्हीं इसकी माता हो। महादेव की आज्ञा से पार्वती विमान से उतरीं तथा बालक को अपनी गोद में उठा लिया। उस समय इन्द्रादि देवों ने करबद्ध होकर शिव-पार्वती को प्रणाम किया। उस बालक को अपने साथ लेकर विमानारूढ़ होकर शिव-पार्वती कैलाश शिखर पर चले गये। कैलाश शिखर पर भगवान शिव ने अपने गणों से कुमार का जन्मोत्सव मनाने के लिए कहा। बड़ी धूमधाम से कुमार कार्तिकेय का जन्मोत्सव मनाया गया। यक्षों, विद्याधरों एवं किन्नरों की स्त्रियों ने कुमार के जन्मोत्सव में प्रसन्नतापूर्वक भाग लिया। कुमार अपनी बाल-लीलाओं से शिव-पार्वती को आनन्दित करता हुआ दिन- प्रतिदिन बढ़ने लगा।

द्वादश सर्ग

तारकासुर के आतंक से भयाकुल देवता इन्द्र के साथ कैलाश पर्वत पर पहुँचते हैं। नन्दी सोने का डंडा लिये पहरा दे रहा था। इन्द्रादि देवताओं ने अपने गणों के साथ बैठे हुए भगवान शिव को देखा। शिव अपने गणों के साथ कुमार कार्तिकेय की शस्त्र विद्या का अभ्यास देख रहे थे। नन्दी ने इन्द्रादि देवताओं के आगमन की सूचना भगवान शिव को दी। शिव ने मुरझाये कमलमुख वाले देवताओं से पूछा, कि आप लोग स्वर्ग छोड़कर इस प्रकार म्लान मुख एवं कान्तिहीन क्यों हैं? क्या आपके कष्टों का हेतु दैत्य तारक है? इस प्रकार महादेव द्वारा आश्वासन मिलने पर इन्द्र ने विनम्र भाव से कहा - ब्रह्मा से वरदान प्राप्त तारकासुर ने हम लोगों को स्वर्ग से निकाल दिया है। अब आप अपने इस अजेय पुत्र को हम देवताओं का सेनापति बनने की आज्ञा दे दीजिए, जिससे हम लोगों की प्राण

| ISSN: 2582-7219 | www.ijmrset.com | Impact Factor: 7.54| A Monthly, Double Blind Peer Reviewed Journal|

| Volume 6, Issue 12, December 2023 |

| DOI:10.15680/IJMRSET.2023.0612038 |

रक्षा हो सके। इन्द्रादि देवताओं की प्रार्थना पर महादेव ने अपने पुत्र कुमार कार्तिकेय से कहा, हे पुत्र! तुम देवताओं के सेनापति बनकर तारकासुर का वध करो।

त्र्योदश सर्ग

सेनापति वेष में कुमार कार्तिकेय अपने माता-पिता की चरण वन्दना करके स्वर्ग की ओर प्रस्थान करते हैं। सभी देवता कुमार का अनुगमन करते हैं। कुमार ने देवताओं को साहस बँधाते हुए स्वर्ग में प्रवेश करने की आज्ञा दी। स्वर्ग में प्रवेश करते ही सबसे पहले आकाश गंगा दिखाई दी। कुमार ने देवनदी मंदाकिनी को प्रणाम किया। तत्पश्चात् नन्दनवन को देखा। नन्दन वन उजड़ा सा दिखाई दे रहा था। कार्तिकेय ने अनुमान लगाया कि तारकासुर के आतंक से ही इस नन्दनवन की यह दुर्दशा हुई है। कुमार कार्तिकेय ने उजड़ी हुई अमरावती नामक सर्वश्रेष्ठ नगरी को देखा। अमरावती की हीन- दीन दशा देखकर कुमार कार्तिकेय को तारकासुर पर बहुत क्रोध आया। इन्द्र कुमार को वैजयन्त नामक भवन में ले गये। उस भवन की सुन्दर दीवारें दैत्यों के हाथियों के दन्ताघात से धवस्त हो गयी थीं। उसी भवन में महर्षि कश्यप विराजमान थे। कुमार कार्तिकेय ने महर्षि को प्रणाम किया। कुमार ने देवमाता अदिति को सिर झुकाकर प्रणाम किया। कुमार ने वहाँ बारी-बारी से इन्द्राणी, देवांगनाओं एवं महर्षि कश्यप की सातों पत्नियों को प्रणाम किया। उन सभी ने कुमार को विजयी होने का आशीर्वाद दिया। इस प्रकार इन्द्रादि देवताओं ने कुमार कार्तिकेय को अपना सेनापति बना लिया। कुमार का सेनापति पद पर अभिषेक होने के अनन्तर देवताओं को विश्वास हो गया, कि हम लोग तारकासुर को युद्ध में अवश्य जीत लेंगे।

चतुर्दश सर्ग

तारकासुर विजयार्थ कुमार कार्तिकेय "विजित्वर" नामक रथ पर आरूढ़ हो गये। यह रथ मन से भी अधिक वेगवान था। इस पर स्वर्णछत्र लगा हुआ था। कुमार के पीछे सभी देवता यथानुरूप अस्त्र-शस्त्रों से सुसज्जित होकर चल रहे थे। ग्यारह रुद्र भी बैलों पर आरूढ़ होकर कुमार के पीछे चल रहे थे। इस प्रकार देव सेना आकाश में तेज गर्जना के साथ चल रही थी। सेना का कोलाहल सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड में गूंजने लगा। देव सेना के प्रस्थान से उठी हुई धूल आकाश में पहुँचकर बादलों का भ्रम उत्पन्न कर रही थी। देवसेना के प्रस्थान का यह रूप देखकर अमरावती के लोग हर्ष का अनुभव कर रहे थे। इस प्रकार सम्पूर्ण चतुर्दश सर्ग में देव सेना के प्रस्थान का घटाटोप वर्णन है। वीर रस का सुन्दर स्वाभाविक वर्णन दृष्टिगोचर होता है।

पञ्चदश सर्ग

इस सर्ग में तारकासुर की सेना के प्रस्थान का स्वाभाविक वर्णन है। जब दैत्यों को कुमार कार्तिकेय के सेनापति होने की जानकारी प्राप्त होती है, तब वे अत्यन्त भयभीत हो जाते हैं। उन्होंने तारकासुर को इस देव सेना के आगमन की सूचना दी। तारकासुर ने अपने सभी सेनापतियों को बुलाया तथ स्वयं सेना के साथ चल पड़ा। तारकासुर की विशाल सेना में इतनी पताकाएँ फहरा रही थीं, कि उनसे धूप तक रुक गयी। दैत्यराज की सेना के प्रस्थान के समय अनेक प्रकार के अपशकुन हो रहे थे। कौवे, गिद्ध आदि भयंकर जीव-जन्तु दैत्य सेना के ऊपर उड़ रहे थे। उसी समय सियारिनियां ऊपर मुँह करके रोने लगी थीं। ऐसा प्रतीत हो रहा था कि मानो

तारकासुर के दिन पूरे हो गये हों। यद्यपि सभी अपशकुन तारकासुर को युद्ध में जाने से रोक रहे थे, परन्तु अभिमानी एवं हठी तारकासुर को कौन रोक सकता था। अभिमान में भरा हुआ तारकासुर चला जा रहा था, उसी समय आकाशवाणी हुई - 'हे दैत्यराज! तू कार्तिकेय के साथ युद्ध करने मत जा' दैत्यराज तारकासुर ने आकाशवाणी को अनसुना करते हुए अपनी सेना को देवसेना के सम्मुख युद्धभूमि में ला खड़ा किया। इतनी विशाल दैत्य सेना को देखकर एकबारगी देवसेना भयाकुल होने लगी, परन्तु कुमार कार्तिकेय ने सभी देवताओं का साहस बँधाया। उन्होंने देवताओं से कहा, कि दैत्य सेना पर आक्रमण करने के लिए तैयार हो जाओ। इस प्रकार देवताओं में उत्साह की लहर दौड़ गयी।

षोडश सर्ग

इस सर्ग में इन्द्र और तारक की सेनाओं के युद्ध का भीषण रूप वर्णित है। युद्धभूमि में पैदल योद्धा पैदल से, घुड़सवार योद्धा घुड़सवार से तथा हाथी पर सवार योद्धा हाथी सवार से भयंकर युद्ध कर रहे थे। युद्धभूमि में रुधिर की नदी बह रही थी। युद्धक्षेत्र का वीभत्स वर्णन कालिदास की लेखनी ने अद्भुत कुशलता के साथ किया है। योद्धा परस्पर शत्रुभाव से वीरता के साथ युद्ध करते हुए वीरगति को प्राप्त हो रहे थे। कहीं-कहीं तो कबन्ध तक परस्पर युद्धरत थे। महावतों से रहित हाथी मदमस्त होकर युद्ध क्षेत्र में योद्धाओं को मर्दित करते हुए भ्रमण कर रहे थे। इस प्रकार सम्पूर्ण सर्ग में देव सेना तथा दैत्य सेना का भीषण युद्ध चलता रहता है। तारकासुर स्वयं युद्ध करने हेतु इन्द्र के सम्मुख आकर खड़ा हो जाता है। इसी दृश्य के साथ सर्ग की समाप्ति हो जाती है।[5,6]

सप्तदश सर्ग

तारकासुर ने देवसेना पर वाणों की ऐसी झड़ी लगा दी कि देवसेना विचलित हो गयी। तारक ने इन्द्रादि देवताओं के गले में नागफाँस के फन्दे डाल दिये। सभी देवता इस विपत्ति से छुटकारा पाने हेतु कुमार कार्तिकेय के समीप पहुँचे। कुमार के दृष्टिपात करने मात्र से देवताओं के नागफाँस छूट गये। इस चमत्कार से तारकासुर अत्यधिक क्रोधित हुआ। उसने सारथी से अपना रथ कुमार कार्तिकेय के

| ISSN: 2582-7219 | www.ijmrset.com | Impact Factor: 7.54| A Monthly, Double Blind Peer Reviewed Journal|

| Volume 6, Issue 12, December 2023 |

| DOI:10.15680/IJMRSET.2023.0612038 |

निकट ले जाने के लिए कहा। कुमार के सम्मुख पहुँचकर तारक ने उन्हें इन्द्रादि देवताओं का साथ छोड़ देने के लिए कहा, परन्तु क्रोधित कुमार ने तारक पर बाण वर्षा आरम्भ कर दी, प्रत्युत्तर में तारक ने भी बाणों का कौशल दिखाया। जब तारकासुर परास्त होने लगा, तब उसने मायावी युद्ध करना प्रारम्भ कर दिया। उसने "वायव्य" नामक बाण धनुष पर चढ़ाया। बाण संधान करते ही प्रचण्ड वेग से धूल भरी आँधी चलने लगी। इस आँधी से देवसेना का साहस क्षीण होने लगा, परन्तु कुमार कार्तिकेय ने अपनी दिव्य शक्ति से देवसेना को पुनः नवशक्ति प्रदान कर दी। इसे देखकर तारकासुर बहुत क्रोधित हुआ, उसने अग्निवाण अपने धनुष पर चढ़ा लिया। आकाश में काला धुआं एवं आग ही आग व्याप्त हो गयी। देवता भयभीत होकर कुमार कार्तिकेय के समीप जा पहुँचे। कुमार ने "वारुणास्त्र" चलाकर अग्नि वाण के प्रभाव को निष्क्रिय कर दिया। तारकासुर क्रोधित होकर अपना रथ छोड़कर कुमार की ओर झपटा। उसने तलवार से कुमार पर प्रहार करना चाहा, परन्तु इससे पूर्व ही कुमार ने भाले का प्रचण्ड प्रहार कर राक्षस तारक का वध कर दिया। राक्षस तारक के वधानन्तर देवताओं की सेना में हर्ष की लहर दौड़ गयी।

इसी के साथ महाकाव्य का अन्तिम एवं सत्रहवां सर्ग समाप्त हो जाता है। महाकवि ने इस पवित्र गाथा को केवल यहीं समाप्त नहीं किया, वे महाकाव्य के उद्देश्यों के निकट इस कथावस्तु को लाना चाहते थे। भारतीय परम्परा की काव्यसमाज पर कल्याणकारी प्रभाव डाले, अतः इसे सुखान्त बनाया जाए। संभवतः कवि प्रवर ने इसी दृष्टि से असज्जन पर सज्जन की विजयश्री के साथ अपने काव्य की इतिश्री की है। विजय का मङ्गलगान करते हुए कवि ने अन्तिम छन्द इस प्रकार लिखा है –

इति विषमशरारेः सूनुना जिष्णुनाजौ
त्रिभुवनवरशल्ये प्रोद्धृते दानवेन्द्र।
बलरिपुरथ नाकस्याधिपत्यं प्रपद्य
व्यजयत सुरचूडारत्नघृष्टाग्रपादः ॥
(इस प्रकार विजयी कार्तिकेय ने जब समस्त संसार के हृदय में कीट की भाँति चुभने वाले तारकासुर को मार डाला तब इन्द्र पुनः स्वर्ग के स्वामी बन गए और सभी देवताओं ने अपने-अपने मुकुट की मणियों सहित अपना मस्तक उनके चरणों पर रखकर उनकी वन्दना की।)

II. विचार-विमर्श

महाकवि कालिदास ने अपने महाकाव्य- 'कुमारसम्भव' में एक अनुपम बात लिखी- 'शरीरमाद्यं खलु धर्म साधनम्' अर्थात् शरीर ही धर्म का पहला और उत्तम साधन है। व शरीर ही धर्म को जानने का माध्यम है। इस तन में ही हम अपनी वास्तविकता को समझ सकते हैं कि हम कौन हैं, कहाँ से आए हैं और कहाँ जाना है?[7]

अब भला ऐसा क्यों कहा गया है, इसे समझने का प्रयास करेंगे.. धर्म का क्या अर्थ होता है? धर्म शब्द 'धृञ्' धातु से निकला है, जिसका मतलब होता है- धारण करना। 'धारणाद् धर्म इति आहुः' अर्थात् जिसे धारण किया जाता है, वही धर्म है।
शास्त्रों में कहा गया है- मनुष्यों में और पशुओं में यदि कुछ भेद है, तो वह है धर्म का। ऐसा क्या है धर्म में? किस धर्म को धारण कर मनुष्य मनुष्य बनता है? विवेकानंद जी ने खरे शब्दों में धर्म को परिभाषित किया- 'Religion is the Realization of God- धर्म परमात्मा की प्रत्यक्षानुभूति है।' आत्मा की ब्रह्मस्वरूपता को जान लेना, उससे तद्रूप हो जाना, उसका साक्षात्कार कर लेना - यही वास्तविक धर्म है।

इस शरीर के माध्यम से ही उस वास्तविक धर्म, ईश्वर व जीवन के वास्तविक लक्ष्य तक हम पहुँच सकते है। इसलिए हमारे शास्त्रों में मानव तन की इतनी महिमा गाई गई है।

"धर्मस्य तत्वं निहितं गुहायाम्।" इस संस्कृत उक्ति का अर्थ क्या होता है?

धर्मस्य तत्त्वं निहितं गुहायां = धर्म तत्त्व तो अत्यन्त गूढ है
तर्कोऽप्रतिष्ठो श्रुतयो विभिन्ना, नैको मुनिर्यस्य वचः प्रमाणम् ।
धर्मस्य तत्त्वं निहितं गुहायां, महाजनो येन गतः स पन्थाः ॥ ४॥आत्मोपदेश॥
तर्क से तो पदार्थ का ज्ञान ही नहीं होता, श्रुतियों का आपस मे विरोध देखा जाता है, कोई एक भी ऐसा मुनि है नहीं, जिसका वचन हम सर्वथा प्रमाण मान सकें और धर्म तत्त्व तो अत्यन्त गूढ है, ऐसी अवस्था मे महापुरुष जिस मार्ग से चलते हों, उसी मार्ग से जाना यही ठीक है ।

जिव्हा दग्धा परान्नेन करौ दग्धौ प्रतिगृहात्।
मनो दग्धं परस्त्रीभिः कार्यसिद्धिः कथं भवेत्।।

| ISSN: 2582-7219 | www.ijmrset.com | Impact Factor: 7.54| A Monthly, Double Blind Peer Reviewed Journal|

| Volume 6, Issue 12, December 2023 |

| DOI:10.15680/IJMRSET.2023.0612038 |

अर्थ- दूसरे का अन्न खाने से जिसकी जीभ जल चुकी है। दूसरे का दान लेने से जिसके हाथ जल चुके हैं। दूसरे की स्त्री का चिंतन करने से जिसका मन जल चुका है। उसे पूजा पाठ जप तप से सिद्धि कैसे मिल सकती है।
"जिह्वा दग्धा परान्नेन" इस उक्ति के द्वारा कर्म का महत्व बताया गया है।

III. परिणाम

आयुरत्यन्तचपलं मृत्युरेकान्तनिष्ठुरः।
तारुण्यं चातितरलं बाल्यं जडतया हृतम्।।
यह उक्ति योगवासिष्ठ ग्रन्थ में आती है। यद्यपि योगवासिष्ठ एक दार्शनिक और गूढ चिंतन वाला ग्रंथ है, लेकिन यह उक्ति सरल है।
इस श्लोक का अर्थ है, कि जीवन अत्यंत चपल होता है, अत्यंत अस्थिर होता है (), मृत्यु एक अपरिहार्य और क्रूर सत्य है। यह जीवन का एकमात्र अंत है। ()
किसी भी व्यक्ति के जीवन में यौवनकाल अत्यंत अल्प समय के लिए होता है (तारुण्यं चातितरलं) और बालावस्था यानी बाल्यकाल अथवा बचपन नासमझी में बीत जाता है (बाल्यं जडतया हृतम्

यह संस्कृत उक्ति निम्नलिखित अर्थ में होती है:
"कष्ट और मूर्खता दोनों ही कष्टदायी होती हैं, जवानी भी कष्टदायी होती है, इससे भी अधिक कष्टदायी होता है दूसरे के घर में रहना।"
इस उक्ति का मूल अर्थ है कि कष्ट सभी व्यक्तियों के जीवन में होते हैं और यह बिना भेदभाव के सभी को प्रभावित करते हैं। अगर हम कोई भी काम अधिक सोच समझकर नहीं करते हैं तो हमारे जीवन में अत्यधिक कष्ट होता है। मूर्ख व्यक्ति को सही और गलत का पता नहीं होता और इस वजह से वो अपने ही कर्मों के कारण परेशानी में पड़ता रहता है. उसे हमेशा कष्ट उठाना पड़ता है. इसलिए, हमें सभी कामों को सोच समझकर करना चाहिए। इसके अलावा, दूसरों के घर में रहना भी एक और बड़ा कष्ट हो सकता है क्योंकि हमें उनकी व्यवस्थाओं और नियमों का पालन करना पड़ सकता है

न कस्यचित्कश्चिदिह स्वभावाद्, भवत्युदारोऽभिमतः खलो वा।
लोके गुरुत्वं विपरीततां वा, स्वचेष्टितान्येव नरं नयन्ति॥
इस संसार में कोई भी व्यक्ति केवल अपने निजी स्वभाव के कारण ही उदार, पसंदीदा या दुष्ट ये नाम नहीं कमाता हैं।
स्वयं के प्रयास ही व्यक्ति को प्रतिष्ठा या विपरीत (अप्रतिष्ठा) लाते हैं।
वाक्कायमनसा नाचरेदशुभम् = वाक् काय मनसा न आचरेत् अशुभम्। = मनुष्य दूसरों के जिस कर्म की निंदा करे (अशुभम्), उसी को स्वयं वाक्, काया और मन (मनसा वाचा कर्मणा) से भी न करे (न आचरेत्)। = मनुष्य दूसरों के जिस कर्म की निंदा करे, उसी को स्वयं वाक्, काया और मन (मनसा वाचा कर्मणा) से भी न करे ।
"पश्येदुपायान् विविधैः क्रियापथैः = अनेक कार्यपद्धतियों से उपायों को ढूँढें।
याने यदि कोई उपाय नहीं दिख रहा हो मैकेनिकल इंजीनियरिंग के सिद्धांत इलेकट्रिकल इंजीनियरिंग पर लगा कर देखें शायद काम बन जाय

- "न कस्य वीर्याय वरस्य सङ्गतिः"इस संस्कृत उक्ति का अर्थ होता है—श्रेष्ठ की सङ्गति से किसका बल नही बढ़ता।अर्थात् श्रेष्ठ की सङ्गति से सबका बल बढ़ता है।
- (प्रतिशब्दार्थ—न=नही, कस्य=किसकी,वीर्याय =बल के लिए, बल बढ़ने के लिए, वरस्य= श्रेष्ठ का,षष्ठी एकवचन,सङ्गतिः=साथ।)
- यह उक्ति कविकुलगुरु कालिदास लिखित "कुमारसंभवम्" महाकाव्य के सर्ग पन्द्रह, श्लोक—51 का अंश है।पूर्ण श्लोक इस प्रकार है— उत्साहिताः शक्तिधरस्य दर्शनान्मृधे महेन्द्रप्रमुखा।अहं मृधे जेतुमरीनरीरमन्न कस्य वीर्याय वरस्य सङ्गतिः।।
- जब देवताओं ने रण में शक्तिशाली कार्तिकेय का दर्शन किया तो उनका उत्साह बढ़ गया और इन्द्र की अगुआई में सभी देवता यह कहकर(प्रसन्नता से भर गये)उत्साहित हो गये कि मैं युद्ध में जीत लूँगा।(ठीक ही है) श्रेष्ठ की संगति से किसका बल नही बढ़ता।अर्थात् श्रेष्ठ की संगति से सबका बल बढ़ता है -यह काकु अर्थात् कण्ठध्वनि से व्यञ्जित होता है।
- अन्वय—शक्तिधरस्य मृधे दर्शनात् उत्साहिताः महेन्द्रप्रमुखाः मखाशनाः मृधे अहम्(एव)अरीन् जेतुम्(समर्थः अस्मि न अन्यः)इति वदन्तः सन्तः अरीरमन् ,वरस्य सङ्गतिः कस्य वीर्याय न(?)।।
- संस्कृत शब्दार्थ-शक्तिधरस्य =आयुधविशेषस्य धारिणः(कुमार कार्तिकेयस्य),मृधे=युद्धे,तस्य कुमारस्य,दर्शनाद्धेतोरुत्साहिता =उत्साह [5,6,7]प्राप्ता,महेन्द्रप्रमुखा=इन्द्रपूर्वा,मखाशना=यज्ञहविर्भोक्तारो देवाः,मृधे=सङ्गरे,'अहम् एव अरीन् शत्रुञ्जेतुं समर्थोऽस्मि नान्यः'इति वदन्तः सन्तो अरीरमत् नेमिरे।तथाहि वरस्य श्रेष्ठस्य सङ्गतिः सम्बन्धः कस्य पुरुषस्य वीर्याय वीर्यं कर्तुं न भवति? अपितु सर्वस्य अपि इत्यर्थः।गतवीर्यस्य वीर्यकरणेमहाश्रय एव निदानं नान्यत् इति काक्का ध्वन्यते।।

IV. निष्कर्ष

"अनाथपरिपालनं हि धर्मः अस्मद्विधानम्।" अर्थात 'हमारे जैसे लोगों का धर्म ही अनाथों (शुक) का पालन करना है।'

| ISSN: 2582-7219 | www.ijmrset.com | Impact Factor: 7.54| A Monthly, Double Blind Peer Reviewed Journal|

| Volume 6, Issue 12, December 2023 |

| DOI:10.15680/IJMRSET.2023.0612038 |

'अनाथपरिपालनं हि धर्मः अस्मद्विधानम्' सूक्ति का सम्बन्ध - कादम्बरी के पूर्वभाग की कथानक के चन्द्रापीड कथा में इस सूक्ति का सम्बन्ध आता है। -

एक चाण्डाल-कन्या विदिशा नगरी के राजा शूद्रक के राजसभा में तोते को प्रस्तुत करती है। तोते ने मनुष्यवाणी में जय शब्द का पउच्चारण सुनकर राजा चकित होकर तोते से उसकी कहाणी पूछते है, तब तोता कहना आरम्भ करता है- विन्ध्याटवी में अगस्त्य ऋषि के आश्रम के समीप पम्पासर के पश्चिमी तट पर एक विशाल शाल्मली के वृक्ष पर उस तोते के माता-पिता घोसला बनाकर रहते थे, प्रसवपीडा के कारण तोते के माता का देहान्त हो जाता है। उसके बाद कोई शबर-सेनापति का अनुयायी वृक्ष पे चढकर पक्षीयों की शिकार करता है। ततपश्चात पिता के पंखो के नीचे छुपा तोता जाबाली ऋषि के पुत्र हारीत को मिलता है। मुनिकुमार हारीत तोते को जाबालि ऋषि के आश्रम में ले गया और आश्रम के मुनियों के पूंछने पर मेरे विषय में इस प्रकार बताया की - "अनाथपरिपालनं हि धर्मः अस्मद्विधानम्।" अर्थात 'हमारे जैसे लोगों का धर्म ही अनाथों (शुक) का पालन करना है।'

केयूरा न विभूषयन्ति पुरुषं हारा न चन्द्रोज्ज्वला
न स्नानं न विलेपनं न कुसुमं नालङ्कृता मूर्धजाः।
वाण्येका समलंकरोति पुरुषं या संस्कृता धार्यते
क्षीयते खलु भूषणानि सततं वाग्भूषणं भूषणम्॥
संस्कृत की यह सूक्ति नीतिशतकम् से ली गई है
अर्थात् न बाजूबन्द से, न चन्द्रमा के समान उज्ज्वल हार से, न स्नान, न सुगन्धित पदार्थो के विलेपन से, न फूलों से, न अलंकृत केशों से, पुरुषों की शोभा तो वाणी रूपी आभूषण से है। साधारण आभूषण नष्ट हो जाते है परन्तु वाणी रूपी आभूषण ही मनुष्य की शोभा को बढाती है।[7]

संदर्भ

1. "Kumarasambhavam by Kalidasa - Synopsis & Story" Archived 2018-11-11 at the वेबैक मशीन. ILoveIndia.com. Retrieved 17 April 2017.
2. कालिदास कृत कुमारसम्भव
3. full text of the Kumārasambhava in Devanāgarī script (first eight sargas)
4. full text of the Kumārasambhava in Roman script at GRETIL
5. The Birth of the War-God, selected translation by Arthur W. Ryder
6. single folio of a Kumārasambhava manuscript in the Cambridge University Library
7. Attempted English translation of text by RTH Griffith

INNO SPACE
SJIF Scientific Journal Impact Factor

Impact Factor
7.54

INTERNATIONAL STANDARD SERIAL NUMBER INDIA

निस्केयर
NISCAIR

INTERNATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY RESEARCH IN SCIENCE, ENGINEERING AND TECHNOLOGY

| Mobile No: +91-6381907438 | Whatsapp: +91-6381907438 | ijmrset@gmail.com |

www.ijmrset.com